बक़लम
हज़रत तस्लीम
लखनवी

हाजी कुल्फ़ीवाला

जागता है खुदा और सोता है आलम ।
कि रिश्ते में क़िस्सा है निंदिया का बालम ॥
ये क़िस्सा है सादा नहीं है कमाल ।
न लफ़्ज़ों में जादू बयाँ में जमाल ॥
सुनी कह रहा हूँ न देखा है हाल ।
फिर भी न शक के उठाएँ सवाल ॥
कि क़िस्से पे लाज़िम है सच का असर ।
यहीं झूठ भी आके बनता हुनर ॥

छापे का क़िस्सागो अर्ज़ करता है कि—

एक है चौक नखास का इलाक़ा और एक हैं हाजी मियाँ बुलाक़ी कुल्फ़ीवाले । पिचासी-छियासी बरस की उमर है; दोहरा थका बदन है । पट्टेदार बाल,

गलमुच्छे और आदाब अर्ज़ करते हुए उनके हाथ उठाने के अंदाज़ में वह लखनऊ मिल जाता है जो आम तौर पर अब खुद लखनऊ को ही देखना नसीब नहीं होता। किसी ज़माने में हाजी मियाँ बुलाक़ी की बरफ़ और निमिष खाने के लिए गोंडा, बहराइच, बलरामपुर, कानपुर और दूर-दूर से रईस शौक़ीन गर्मी-सर्दी के मौसमों में दो बार लखनऊ तशरीफ़ लाते थे। बुलाक़ी की बदौलत चार नाचने-गाने वालियों, उनके लगुए-भगुओं और चार क़िस्म के सौदागरों का भी भला हो जाता था। बुलाक़ी मियाँ ने हज़ारों रुपए पैदा किये। पक्का दो-मंज़िला मकान बनवाया। दो बार हज कर आये। पहले लड़के और फिर लड़की की शादी धूमधाम से की। न लड़की रही न लड़का; पंद्रह-बीस बरसों के आटे-पाटे में हाजी पिस गये।

लड़की का ग़म लड़के के दम पर सह लिया। लड़का भी ऐसा होशियार था कि बाप का नाम दोबाला किया। सत्रह-अठारह साल हुए एक दिन राह चलते हार्टफ़ेल हुआ और चटपट हो गया। अपने पैरों घर से गया था; पराये हाथों उठकर उसकी लाश आयी।

साल डेढ़ साल तो ग़म में टूटे-सिमटे बदहवास बैठे रहे मगर फिर पोतों के मुँह देखकर हाजी बुलाक़ी मियाँ ने अपना जी कड़ा किया। सोचा कि घर से निकाल कर खाते-खाते तो एक दिन कारूँ का खज़ाना भी चुक जाता है, फिर बाद मेरे इन बच्चों का क्या होगा। इसलिये हाथ पैर गो थके ही सही, मगर जब तक चलते हैं तब तक पुराने हुनर से इतने जनों का पेट क्यों न भरूँ—कुल्फ़ियाँ धोने और दूध वग़ैरा औटाने-भरने के चक्कर में बूढ़ी का ध्यान बँटेगा, दुलहिन का वक़्त कटेगा, बच्चों के पेट में बहाने से कुछ न कुछ दूध-मेवा भी पहुँचता रहेगा और मेरा भी बाहर निकलना हो जायगा—अब और किया क्या जाय?

इस तरह एक दिन बादाम, पिस्ता, चिरौंजी, इलायची, ज़ाफ़रान, शकर, संतरे और अनारों का सौदा कर लाये; दूध, रबड़ी, बालाई लाये, कुल्फ़ियाँ धोयीं; कढ़ाव चढ़ाया। उन्नीसवीं सदी में उस्तादों की चिलमें भर-भर के सीखे हुए हुनर के हाथ रच-रचकर दिखलाये। फिर हाजी बुलाक़ी मियाँ की तजुर्बेकार बीवी उम्र भर के सधे हाथों से डले में कुल्फ़ियाँ सजाने बैठीं। बरफ़ भर कर हाँडी हिलायी। तब तक हाजी बुलाक़ी मियाँ ने पुराने वक़्तों में रईसों-नवाबों और अंग्रेज़-हिंदुस्तानी हाकिमों से मिले सार्टीफ़िकटों का रजिस्टर निकाला। यह चमड़े का रजिस्टर वज़ीरे ने मरने के कुछ ही दिनों पहले कानपुर से पिचहत्तर रुपए में बनवाया था। हर पुश्त पर दो सार्टीफ़िकट चमड़े के फ़्रेम में मढ़ दिये। उसमें न टूटने वाले काग़ज़ी काँच भी जड़े हैं। अब्बा को अपने ये सार्टीफ़िकेट बहुत प्यारे हैं, इसलिए वज़ीरे यह क़ीमती रजिस्टर बनवा कर लाया था। हाजी उस दिन फूले न समाये थे, आज उस दिन को रोये। फिर अपने को सँभाला, कहीं बूढ़ी न देखले। उजला कुरता, चूड़ीदार पाजामा और टोपी पहनी। मज़दूर को बुलवाया, डला उसके सिर लादा और क़रीब सत्रह-अठारह बरसों के बाद अल्लाह का नाम लेकर कुल्फ़ियाँ बेचने निकले। इस बार बूढ़े-बूढ़ी दोनों ही एक दूसरे की आँखों को

आँसुओं के हमले से न बचा सके। परदे की ओट में दुलहिन भी रो पड़ी। उसकी सिसकी सुनकर हाजी बुलाक़ी तेजी से बाहर चले आये। गली से बाहर आकर नख़ास-बाज़ार में पहली आवाज़ लगी : 'कुल्फ़ी मलाई की बरफ़!' गला भर-भर आया।

दूसरी आवाज़ में ही बुलाक़ी मियाँ ने अपने आपको सँभाल लिया। वह इंसान ही क्या जो मुसीबत न झेल सके। घंटे के हिसाब से एक इक्का तय किया और उम्र भर के बरते हुये बाज़ार को छोड़कर हज़रतगंज, जापलिंग रोड और पंच-बँगलियों की तरफ़ चले। हिंदुस्तान को आज़ादी बस मिलने वाली ही थी। नया दौर शुरू हो चुका था। एक आला हाकिमे-ज़माना के वालिद बुज़ुर्गवार का दिया हुआ सार्टीफिकट भी उनके रजिस्टर में मौजूद था। उन्हीं की कोठी का नंबर पूछते-पूछते जा पहुँचे। इक्का कोठी से बाहर ही खड़ा करवाया और रजिस्टर लिये अंदर गये। अर्दली से पूछा तो मालूम हुआ कि साहब पीछे वाले बग़ीचे में फ़ुरसत से बैठे हैं। अर्दली को दुआएँ दीं और कहा कि ज़री ये ख़त हुज़ूर की ख़िद-मत में पेश कर दो; मेरे बुढ़ापे पे तरस खाओ। अर्दली को रजिस्टर खोल कर दिया और ख़त पर हाथ रख कर बतला भी दिया। हाकिम-ज़माना बाप की लिखावट बरसों बाद अचानक देख कर बहुत ख़ुश हुए, रजिस्टर के दूसरे सर्टी-फ़िकट पढ़ने लगे, फिर बुलाक़ी मियाँ को बुलवा लिया।

हाजी बुलाक़ी मियाँ महज़ ख़ालिस माल से ही नहीं बल्कि अपनी बातों और अदब-क़ायदे से भी ग्राहकों को ख़ुश करते

हैं। हाकिम-ज़माना, उनकी बेगम साहबा और दोनों जवान बेटियों के हाथ में तश्तरियाँ पहुँचीं नहीं कि हाजी बुलाक़ी ले उड़े : "कुल्फ़ी में हुज़ूर दूध औटाने और शकर मिलाने में ही सिफ़्त होती है। कुल्फ़ी की तारीफ़ तो तब है जब कि यहाँ खोली जाय और बनारसी बाग़ में जाकर खायी जाय। इतनी देर में अगर कुल्फ़ी गल जाय तो फिर हुज़ूर वह शौक़ीनों के खाने क़ाबिल नहीं। और बात सरकार यहीं तक नहीं, कुल्फ़ी जमाने के फेर में अगर इतनी बरफ़ डाल दी कि खानेवाले के दाँत गले और ज़बान ठिठुरी तो फिर हुज़ूर सिफ़्त क्या रही। आजकल के कुल्फ़ी वाले लखनऊ के पुराने हुनर को नहीं जानते। हमारे उस्ताद ने सिखाया था कि अव्वल तो ये समझो कि कुल्फ़ी में तरावट किस चीज़ की है, बरफ़ की या दूध, बालाई, रबड़ी, फलों, मेवों की।

यही तो पकड़ की बात है बेगम साहबा, अल्लाह आप सबको जीता रक्खे। माल को हुज़ूर तरावट इतनी ही देनी चाहिये कि उस पर से मौसमे-गर्मी का असर हट जाय। अगर दाँत गले तो परखैया परखेगा क्या ?"

पढ़ी-लिखी लड़कियों और हाकिमे-आला पर बातों का असर होने लगा। बुलाक़ी मियाँ ने लड़कियों की ओर मुख़ातिब होकर सुनाया : "आपके जन्नत-नशीं दादाजान को ख़ुश करना हर एक के बस की बात न थी, हुज़ूर मेरी बात के गवाह होंगे। आपके दादाजान एक बार छोटे लाट साहब के यहाँ खाना खाने गये थे। वहाँ मुर्ग़-मुसल्लम की बड़ी तारीफ़ हो रही थी। कई और अंग्रेज़ हाकिम थे। शहर के कुछ रईस नवाब भी थे। सभी लाट साहब के बाबर्ची के लाम बाँध चले। आपके दादाजान ख़ामोश बैठे रहे। लाट साहब बोले कि नवाब साहब आपने तारीफ़ नहीं की। आपके दादाजान ने फ़रमाया कि हुज़ूर तारीफ़ के क़ाबिल कोई चीज़ तो हो। फिर उन्होंने अपने यहाँ सबको दावत दी। साहबज़ादियो, मेरी बात के चश्मदीद गवाह हमारे सरकार यहाँ तशरीफ़-फ़र्मा हैं। जहाँ तक मुझे ध्यान है हुज़ूर उस वक़्त कोई दस या ग्यारह साल के रहे होंगे।...."

इसके बाद हाकिम-ज़माना और उनका ख़ानदान हाजी बुलाक़ी मियाँ का अज़स-रेनौ सरपरस्त हो गया। फिर कोई शान-दार कोठी-बँगले वाला हाजी बुलाक़ी की कुल्फ़ियों से महरूम न रहा। हाजी बुलाक़ी की कुल्फ़ी और निमिष का शुमार भी लखनऊ के कल्चर में हो गया। विदेशी मेहमानों को लखनऊ आने पर चिकन के कुरते, दुपलिया टोपी, रूमाल और साड़ियाँ, मिट्टी के खिलौने और मशहूर इत्रों के तोहफ़े तो दिये ही जाते थे, हाजी बुलाक़ी की कुल्फ़ी या सर्दियों में निमिष भी खिलायी जाने लगी। अंग्रेजी के अख़बार-वालों ने उनकी तस्वीरें तक छापीं। सालभर में हाजी साहब का कारबार चल-निकला। गो पहले की आमदनी के मुक़ा-बिले में अब चौथाई भी न होती थी क्योंकि इनाम-इकराम देने वाले रईस अब नहीं रहे, पर ज़माने को देखते हुए हाजी साहब की रोज़ी सध गयी। मुनाफ़े के लालच में माल निखालिस न किया, इज़्ज़त और नाम पर डटे रहे। धीरे-धीरे दो पोतों को हाकिम-ज़माना की बदौलत मुस्तक़िल चपरासियों में भरती करवाया। मुहल्ले-पड़ोस और रिश्तेदारों के कई लड़कों को छोटे-मोटे काम दिलाये। बड़ी इज़्ज़त बढ़ गयी। ख़ुदा का शुक्र है बूढ़ी ज़िंदा है, बहू है, बड़े पोते की बहू है। अल्लाह के फ़ज़लो-करम से उसके आगे भी दो बच्चे हैं। छोटे पोते की शादी भी पारसाल कर दी मगर वह लड़की बड़ी कल्लेदराज़ है। सुखचैन के चाँद में बस यही एक गहन लग गया है वरना हाजी बुलाक़ी अब अपना ग़म भूल चुके हैं।

एक दिन किसी वक़्त की नामी नाचने-वाली मुश्तरीबाई का आदमी उन्हें बुलाने आया। हाजी दोपहर के वक़्त उसके यहाँ गये। उन्होंने मुश्तरी को बच्ची से जवान और बूढ़ी होते देखा था। उसका ज़माना देखा था कि रईसों-नवाबों के पलक-पाँवड़ों पर चलती थी। अब भी पुरानी लाखों की माया है मगर ज़माना अब तवायफ़ों का नहीं रहा। लड़कियों को बी० ए०, एम० ए० पास कराया है मगर अब गाड़ी

आगे नहीं चलती। दरअस्ल मुश्तरी चाहती है कि दोनों की कहीं शादियाँ कर दे। यही नामुमकिन लगता है। हार कर दोनों को आदाब-तहज़ीब सिखायी और थोड़ी-बहुत नाच और गाने की तालीम भी दिलवा दी है। कचोट लड़कियों के जी में भी है मुश्तरी के मन में भी। आजकल सहारनपुर का एक रईसज़ादा दोनों लड़कियों का नया-नया दोस्त हुआ है। उसे शादी करने से एतराज़ नहीं क्योंकि उसकी माँ एक योरोपियन नर्स थी, जिसे उसके वालिद ने मुसलमान बनाकर अपनी क़ानूनी बीवी बनाया था। वह लड़का जब लखनऊ आता है तो फ़लाँ-फ़लाँ अफ़सर के घर मेहमान होता है। उनके यहाँ हाजी की निमिष खा चुका है, हाजी को जानता है। मुश्तरी हाजी बुलाक़ी की बातों के कमाल को जानती है। बाप की तरह उनके पैर पकड़कर कहा, "उस लड़के को अपने शीशे में उतार लें हाजी साहब तो बड़ा सबाब होगा। मैं जानती हूँ आयंदा ज़माने में ये जिंदगी इन लड़कियों से न सधेगी। अब इस पेशे में इज़्ज़त नहीं रही। एक से पार पाऊँ तो दूसरी के हाथ पीले करने का रास्ता खुले।"

हाजी बुलाक़ी मान गये। दूसरे दिन शाम को मुश्तरी के यहाँ जा पहुँचे। बड़ी आवभगत हुई। सहारनपुरी रईसज़ादा वहाँ मौजूद था, दोनों लड़कियाँ तो थी हीं।

हाजी ने डले में हाथ डालते हुए कहा : "छोटे सरकार, खाना-पहनना और इश्क़ करना यों तो परिंदे-दरिंदे तक जानते हैं, मगर इनमें तमीज़ रखने और हज़ार पर्दे छान कर इनकी ख़ूबी और अस्लियत पहचानने की क़ूवत अल्लाहताला ने सिरिफ़ इंसान को ही अता फ़रमायी है। वो भी हरएक को नसीब नहीं। आपको अपने लड़कपन का हाल सुनाता हूँ। कोई सोलह-सत्रह बरस की उमर होगी मेरी। उस्ताद के साथ जाया करता था। एक बहुत बड़े ताल्लुक़ेदार थे। लंबा-चौड़ा डील-डौल, गोरा सुर्ख़ाबी बदन और उनकी बड़ी-बड़ी आँखें हसीन नाज़नियों के लिये चुंबक थीं। आला ईरानी ख़ानदान के, पुश्त दर पुश्त से पोतड़ों के रईस थे। मगर आम रईसों की तरह भोले-भाले न थे। उनके दो आँखें ऊपर थीं तो चार भीतर थीं। सबका राज़ लेकर किसी को अपना राज़ न देते थे। अपने

ज़माने के पक्के खिलाड़ी थे । सरकार, हज़ारों ने घेरा उन्हें, सैकड़ों ने रिझाया, जाल-कंपे डाले मगर जिस तवायफ़ का मैं ज़िकर कर रहा हूँ वह अपने ज़माने की नामी और हसीन थी । दिल में तमन्ना रख कर भी उसने कभी मुँह से कुछ न कहा । नवाब साहब उसकी ख़िदमतों को समझते रहे । जब ख़ूब परख लिया तो उसे निहाल भी कर दिया । बाक़ी सब मुँह देखती ही रह गयीं । फिर ऐसा भी वक़्त आया कि नवाब साहब अपने चचा से मुक़दमा लड़कर अपनी कुल इस्टेट हाई-कोरट में हार गये । तब उस तवायफ़ ने कहा कि जानेमन, तुम हो मेरे, ये ज़ेवर, दौलत और जायदाद मेरी नहीं है । इससे लंदनवाली अदालत तक मुक़दमा लड़ो और सुर्ख़रूई हासिल करो । यही हुआ भी । नवाब साहब फिर मालामाल हो गये । बाद में नवाब साहब ने उस तवायफ़ से पूछा कि तुमने मुझमें ऐसा क्या देख लिया जो औरों की नज़र में न पड़ा । तवायफ़ बोली : "मैंने देखा कि तुम उतावले नहीं बल्कि पारखी हो और इंसाफ़-पसंद हो । बस इसके सिवा फिर कुछ देखने को नहीं रहा ।" इस पर नवाब साहब ने उससे कहा, "सैलाबे-इश्क़ अब अपनी हद पर है । अब मैं तुम्हें अपनी नौकर-तवायफ़ की हैसियत से नहीं देख पाता । तुम मेरी मलिका हो ।" बाक़ायदा हुज़ूर निकाह पढ़वाकर उसे अपने महलों में ले गये । तो इश्क़ इसे कहते हैं । हर चीज़ हुज़ूर समझदारी माँगती है । अब कुल्फ़ियों को ही ले लीजिये—एक-एक ठंडा रेशा मुँह की गर्मी पाते ही पहले तो खिले और फिर धीरे-धीरे घुलता जाय । ज्यों-ज्यों घुले त्यों-त्यों मिठास बढ़ती जाय । जो ख़ुशबू या जो मसाले डाले हों वे अपनी जगह पर बोलें ।.....यही मज़ा इश्क़ का भी है । सरकार का रुतबा आला है मगर उम्र में हुज़ूर मेरे बच्चों के बच्चे के बराबर हैं । मेरी बातें आज़मा देखियेगा ।"

हुज़ूर पर हाजी की बातों का सुरूर गँठने लगा । हाजी बुलाक़ी कुल्फ़ियाँ खिलाते चले । लड़कियों और मुश्तरी की तारीफ़ करते चले, "लड़कियाँ रतन हैं मगर ख़ुदा के इंसाफ़ से जिस पेशे में जनम लिया है उसमें बेचारियों को बेक़ुसूर घुटना होगा । कहाँ तो ये पढ़ी-लिखी तहज़ीबयाफ़्ता लड़कियाँ, और कहाँ आज के ज़माने का दोज़ख !—"

"हुज़ूर, यह मुश्तरी बड़ी नेक लड़की है । इसने अपना ज़माना देखा है । मगर मैं इसके मुँह पर कहता हूँ कि अभी तो लड़कियों का मुँह देख कर इस फ़िराक़ में है कि इनकी शादियाँ हो जायँ । मगर, ख़ुदा मेरी इन बच्चियों को हर ख़तरे से बचाये, महज़ बात के तौर पर ही कह रहा हूँ कि बाद में हार कर यही मुश्तरी लड़कियों से कहेगी कि पेशा करो, यारों को ठगो और अगर मेरे कहे मुताबिक़ तुम लोग नहीं करोगी तो घर से निकलो । अरे हुज़ूर झूठ नहीं कहता, अपनी लड़कियों के हक़ में इन नायकाओं से बढ़कर कोई बुरा नहीं होता । रुपयों की लूट के पीछे दीवानी ये और कुछ भी नहीं सोचतीं । आपको एक क़िस्सा सुनाता हूँ ग़रीबपरवर । एक नौजवान रईस थे । एक तवायफ़ से उनका दिल मिल गया । उसे निहाल कर दिया । मगर नायका का पेट इतने से ही न भरा । एक और बूढ़े भोंदू रईस को भी फँसा लिया । लड़की लाख कहे कि अम्मा मुझसे बेवफ़ाई न कराओ मगर

अम्मा झिड़क-झिड़क दें। कहें कि ऐसा सदा से होता आया है। खैर हुजूर, होते-करते एक दिन नौजवान रईस को भी पता चल गया। वह चार गुंडों को लेकर उसके कोठे पर चढ़ आया। तवायफ़ की नाक काटी, बूढ़े की तोंद में करौली घुपी। बड़ा बावेला, तोबातिल्ला मचा। खैर, क़िस्सा खत्म हुआ मगर बेचारी लड़की नाक कटने के बाद दीनो-दुनिया, किसी अरथ की न रही। बतलाइये भला उसका क्या क़ुसूर था जो ये सजा पायी। यही न कि तवायफ़ के घर पैदा हुई थी इसलिये अपने आशिक से शादी न कर सकी और अपनी नायका-अम्मा के बस में उसे रहना पड़ा। मैं ऐसी-ऐसी सैकड़ों मिसालें दे सकता हूँ। इस बच्ची की सूरत देख कर तरस आता है। अब तो सरकार भी यह पेशा खत्म कर रही है। खुदा इन पर रहम करे।"

बातों का सिलसिला बढ़ाते रहे, और दो-तीन रोज में ही लड़का राजी हो गया। मुश्तरी अब हाजी बुलाक़ी के पाँव पकड़ती है, कहती है, दूसरी की शादी भी करवा दो तब घर बैठ कर खुदा का नाम लेना।

लेकिन अब एक मुश्तरी की लड़कियाँ ही नहीं, कई और भी हाजी साहब से नयी ज़िंदगी माँगती हैं। हाजी दिल ही दिल में परेशान रहते हैं कि सबको कहाँ पार लगायें।

रामतीर्थ ब्राह्मी तैल

(स्पेशल नं० १) (रजिस्टर्ड)

फूंसी और झड़ते बालों को बचाने, बाल काला करने तथा रेशम की तरह बालों के लिए एक मूल्यवान बालों का टानिक है। यह कीमती औषधियों से बनाया जाता है जो कि मस्तिष्क को शीतलता प्रदान करता है। स्मरण शक्ति को बढ़ाता है और आंखों की गरमी और नियमित सिरदर्द को दूर करता है और गहरी नींद प्रदान करता है।

योगासन चार्ट

आप योगासन चित्रपट में दर्शाए विभिन्न योगासनों का अभ्यास नियमित रूप से करके स्वस्थ शरीर का आनन्द ले सकते हैं।

श्रीराम तीर्थ योगाश्रम दादर बम्बई–१४

वितरक– आर० जे० शाह एन्ड कम्पनी

८७२, जोशी लेन, करौलबाग, रोहतक रोड, नई दिल्ली

Manufacturers: **UNIVERSAL PERFUMERY WORKS BOMBAY. 3.**

K.S.K. HIN.

एजेंट, दिल्ली और पंजाब : सोराबजी खन्ना एण्ड को०, सदर बाजार, दिल्ली ।